प्रकाशन तिथि : 26 सितम्बर 2018, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 37, अंक 3, कुल पृष्ठ 28

ISSN 2454 - 5163

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री चंवलेश्वर पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, भीलवाड़ा (राज.)

वीतराग-विज्ञान (422)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन :(0141)2705581, 2707458
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

ISSN 2454 - 5163

शुल्क :

आजीवन :	251 रुपये
वार्षिक :	25 रुपये
एक प्रति :	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी :	7200
मराठी :	2000
कन्नड़ :	1000
कुल :	10200

जीव की कर्मशक्ति

सम्यग्दर्शनादि धर्मरूप निर्मल कर्म कहीं बाहर से नहीं आता; किन्तु आत्मा में ही उस रूप होने की शक्ति है, आत्मा के स्वभाव का अवलम्बन करने से आत्मा स्वयं ही वैसे निर्मल कार्यरूप से प्रसिद्ध होता है। देखो, यह आत्मा की कार्यशक्ति! आत्मा की कार्यशक्ति ऐसी नहीं है कि जड़ का कुछ करे; विकार करे वह भी वास्तव में आत्मा की शक्ति का कार्य नहीं है, किन्तु शुद्ध ज्ञान-दर्शन-आनन्दादि भाव आत्मा का सच्चा कर्म है।

शरीर-कर्म-भाषा आदि परमाणु की अवस्था है, वह परमाणु का कार्य है, क्योंकि वह उनमें तन्मय है।

राग-द्वेष-पुण्य-पापादि विकारी भावरूप अवस्था वह मिथ्यादृष्टि का कार्य है, क्योंकि वह उनमें तन्मय है।

सम्यक्त्वी तो अपने सम्यक्श्रद्धा-ज्ञान-आनन्दरूप भावों में तन्मय होता है और वही आत्मा का वास्तविक कार्य है तथा वही आत्मा द्वारा प्राप्त किया जाता है। आत्मा द्वारा कर्मरूप से प्राप्त किया जाने वाला ऐसा जो सिद्धरूप साधकभाव (उस-उस समय प्रसिद्ध हुआ साधकभाव) वही धर्मात्मा का कर्म है, उसके द्वारा आत्मा की कर्मशक्ति पहिचानी जाती है। राग वास्तव में आत्मा का स्वाभाविक कर्म नहीं है, इसलिये उसके द्वारा कर्मशक्तिवाले आत्मा की पहिचान नहीं होती।

– आत्मप्रसिद्धि, पृष्ठ 491-492

वीतराग-विज्ञान

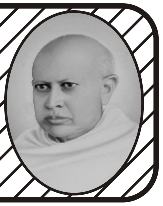

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 37 (वीर नि. संवत् - 2544) 422 अंक : 3

अब मेरे समकित सावन आयो

अब मेरे समकित सावन आयो।।टेक।।
बीति कुरीति मिथ्यामति ग्रीषम, पावस सहज सुहायो।
अब मेरे समकित सावन आयो।।1।।

अनुभव-दामिनी दमकन लागी, सुरति घटा घन छायो।
बोले विमल विवेक पपीहा, सुमति सुहागिन भायो।।
अब मेरे समकित सावन आयो।।2।।

गुरु धुनि गरज सुनत सुख उपजे, मोर सुमन विहंसायो।
साधक भाव अंकुर उठे बहु, जित तित हरष सवायो।।
अब मेरे समकित सावन आयो।।3।।

भूल धूल कहिं मूल न सूझत, समरस जल भर लायो।
भूधर को निकसे अब बाहिर, जिन निरचू घर पायो।।
अब मेरे समकित सावन आयो।।4।।

-कविवर पण्डित भूधरदासजी

पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट, जयपुर द्वारा
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

21वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(शुक्रवार, दिनांक 5 अक्टूबर से शुक्रवार 12 अक्टूबर, 2018 तक)

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के निर्देशन में आयोजित उक्त शिविर में विशेषज्ञ विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से जैनदर्शन के विविध विषयों का गहराई से अध्ययन/अध्यापन किया जायेगा। अत: अन्य शिविरों से पृथक् यह शिविर जैनदर्शन के सूक्ष्म अध्ययन के इच्छुक जिज्ञासुओं के लिये एक स्वर्ण अवसर होगा।

विद्वत्समागम :- **ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, डॉ. शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. वीरसागरजी शास्त्री दिल्ली, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, डॉ. नरेन्द्रजी शास्त्री जयपुर, डॉ. योगेशजी शास्त्री अलीगंज, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री कोटा, डॉ. प्रवीणकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अच्युतकान्तजी शास्त्री जयपुर।**

{ आप सभी को शिविर में पधारने हेतु हार्दिक आमंत्रण है। }

नोट : कृपया अपने आगमन की पूर्व सूचना अवश्य देवें।

संपर्क – पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.)
फोन : 0141-2705581, 2707458 **E-mail : ptstjaipur@yahoo.com**

सम्पादकीय

कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन

(गतांक से आगे ...)

केवल द्रव्यलिंग से कार्य नहीं होता

(८३)

धम्मेण होइ लिंगं ण लिंगमेत्तेण धम्मसंपत्ती।
जाणेहि भावधम्मं किं ते लिंगेण कायव्वो ॥।

(हरिगीत)

धर्म से हो लिंग केवल लिंग से न धर्म हो।
समभाव को पहिचानिये द्रवलिंग से क्या कार्य हो? ॥।

धर्मसहित तो लिंग होता है, परन्तु लिंगमात्र से धर्म की प्राप्ति नहीं होती है। इसलिए हे भव्यजीव ! तू भावरूप धर्म को जान, केवल लिंग से तेरा क्या कार्य सिद्ध होता है? तात्पर्य यह है कि अंतरंग निर्मल परिणामों सहित लिंग धारण करने से ही धर्म की प्राप्ति होती है।

यह गाथा भी अष्टपाहुड़ के लिंगपाहुड़ की दूसरी गाथा है। इस गाथा में यह समझाया गया है कि अकेला लिंग धारण करने से, दिगम्बर वेष धारण कर लेने से काम होनेवाला नहीं है, धर्म होनेवाला नहीं है, मुक्ति प्राप्त होनेवाली नहीं है।

धार्मिक वृत्ति और प्रवृत्ति से लिंग (वेश) की शोभा है।

दिगम्बर समाज में दिगम्बर सन्तों के प्रति जो अपार श्रद्धा है; वह हमारे लिए गौरव की बात है; किन्तु चिन्ता का विषय यह है कि वह अपार श्रद्धा निरंकुशता का कारण बन रही है, शिथिलाचार का कारण बन रही है।

वह श्रद्धा अंधश्रद्धा में परिणमित हो रही है।

अतिचार की बात तो बहुत दूर, वे लोग तो अनाचारों पर भी ध्यान नहीं देते।

झगड़ा द्रव्यलिंग और भावलिंग का नहीं; नटश्रमणों के अनाचारों का है।

नरक निगोद की बात द्रव्यलिंगियों की नहीं; द्रव्यलिंगी तो नवमें ग्रैवेयक तक जाते हैं।

अष्टपाहुड़ में तो दिगम्बर वेष धारण करके भी परिग्रह का संग्रह, महिलावर्ग का सम्मोहन, असंयमी शिष्यों का अति परिचय, समागम करने वालों को नटश्रमण कहा है। ऐसे लोगों से समाज को बचाना ही आचार्यश्री कुन्दकुन्द का उद्देश्य है।

यह भ्रष्टों पर आक्रोश नहीं, अपितु आचार्यदेव की परम करुणा है। ऐसी परिणति से भविष्य में होनेवाले अनन्त दु:खों से बचाने का भाव है; अत: करुणाभाव है।

यदि हम साधारण गृहस्थ समाज को नहीं बचा सकते तो कोई बात नहीं स्वयं को तो बचा ही सकते हैं; पर इस दिशा में भी कोई प्रयास दिखाई नहीं देता।

हम सभी आँख मीच कर बैठ गये हैं।

हमारे महाभाग्य से आज भी मार्ग तो उपलब्ध है और मार्गदर्शक भी विद्यमान हैं।

मुक्तिमार्ग के सशक्त प्रतिपादक परमागम बड़ी सुगमता से उपलब्ध हैं, उनका मर्म समझानेवाले ज्ञानी धर्मात्मा भी प्राप्त हैं, क्षयोपशम की भी कमी नहीं है; पर न जानें क्यों जगत को रास्ता सूझता ही नहीं।

क्या करें ? होनहार का विचार कर ही समता आती है।

तम्हा कम्मेसु मा रज्ज

(८४)

रत्तो बन्धदि कम्मं मुच्चदि जीवो विरागसंपत्तो।
एसो जिणोवदेसो तम्हा कम्मेसु मा रज्ज॥

(हरिगीत)

विरक्त शिवरमणी वरें अनुरक्त बाँधे कर्म को।
जिनदेव का उपदेश यह मत कर्म में अनुरक्त हो॥

रागी जीव कर्म बाँधता है और वैराग्य-सम्पन्न जीव कर्मों से छूटता है – ऐसा जिनेन्द्र भगवान का उपदेश है; अतः हे भव्यजीवो ! शुभाशुभ कर्मों में राग मत करो।

यह गाथा समयसार ग्रंथाधिराज की १५०वीं गाथा है। इसमें यह बताया गया है कि मूल बात मात्र इतनी ही है कि रागी जीव बंधते हैं और विरक्त जीव मुक्ति प्राप्त करते हैं। इसलिए कर्मों में राग मत करो।

यहाँ रागी शब्द का अर्थ सामान्य राग नहीं लेना; अपितु शुभाशुभ राग में एकत्व-ममत्व बुद्धिरूप राग लेना चाहिए, **रागभावों का स्वयं को कर्ता-भोक्ता माननेरूप राग लेना चाहिए तथा शुभभावों में धर्म माननेरूप राग लेना चाहिए।** तात्पर्य यह है कि मिथ्यात्व संबंधी राग लेना चाहिए। शुभराग को धर्म मानना ही मिथ्यात्व है और उसी को यहाँ राग कहा गया है। ऐसे राग से संयुक्त जीव रागी है तथा वही कर्मों को बाँधता है और कर्मों से बँधता है।

इसप्रकार यह सुनिश्चित हुआ कि **अशुभभावों के समान शुभभाव भी बंध के कारण होने से मोक्ष के हेतु नहीं हैं; मोक्ष का हेतु तो एकमात्र वीतरागभाव ही है, ज्ञानभाव ही है।**

इस गाथा की टीका में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कलश आया है; जो इसप्रकार है –

(शिखरिणी)

निषिद्धे सर्वस्मिन् सुकृतदुरिते कर्मणि किल
प्रवृत्ते नैष्कर्म्ये न खलु मुनय: सन्त्यशरणा:।
तदा ज्ञाने ज्ञानं प्रतिचरितमेषां हि शरणं
स्वयं विन्दन्त्येते परमममृतं तत्र निरता:।।१०४।।

(रोला)

सभी शुभाशुभभावों के निषेध होने से।
अशरण होंगे नहीं रमेंगे निज स्वभाव में।।
अरे मुनीश्वर तो निशदिन निज में ही रहते।
निजानन्द के परमामृत में ही नित रमते।।१०४।।

सुकृत (पुण्य) और दुष्कृत (पाप) – सभी प्रकार के कर्मों का निषेध किये जाने पर निष्कर्म अवस्था में प्रवर्तमान निवृत्तिमय जीवन जीनेवाले मुनिजन कहीं अशरण नहीं हो जाते; क्योंकि **निष्कर्म अवस्था में ज्ञान में आचरण करता हुआ, रमण करता हुआ, परिणमन करता हुआ ज्ञान ही उन मुनिराजों की परम शरण है।** वे मुनिराज स्वयं ही उस ज्ञानस्वभाव में लीन रहते हुए परमामृत का पान करते हैं, अतीन्द्रियानन्द का अनुभव करते हैं, स्वाद लेते हैं।

उक्त छन्द में आचार्यदेव यह कहना चाहते हैं कि कोई व्यक्ति यह कहे कि यदि हम शुभ और अशुभ दोनों ही भावों का निषेध कर देंगे तो फिर सर्व कार्यों से निवृत्ति ले लेनेवाले मुनिराज क्या करेंगे ? उन्हें तो कोई काम ही नहीं रहेगा।

आचार्यदेव का यह सोचना गलत भी नहीं है; क्योंकि हम आज भी लोगों को इसप्रकार की चर्चा करते देखते हैं। **स्वयं को मुनि मानने वाले अनेक लोग आज भी शुभकार्यों में संलग्न देखे जाते हैं। वे शुभभावों और शुभप्रवृत्ति को ही धर्म मानते हैं, जानते हैं और उसमें ही धर्म मानकर नित्य प्रवृत्त रहते हैं।**

ऐसे लोगों को समझाने की भावना से उक्त छन्द की रचना हुई है, जिसमें आचार्यदेव कहते हैं कि **उनके लिए तो रमण करने के लिए उनका ज्ञानस्वभावी आत्मा सदा उनके पास ही विद्यमान है, वे तो निरंतर अपने आत्मा में ही रमण करते हैं, वे निठल्ले नहीं हैं। वे सदा ही अपने आत्मा की आराधना में लीन रहते हैं**, उन्हें शुभभाव करने की, शुभाशुभ प्रवृत्ति करने की फुर्सत ही कहाँ हैं ?

अरे भाई ! शुभभाव मुनियों की शरण नहीं है, उनका शरण तो उनका ही भगवान आत्मा है। आत्मा का ज्ञान, आत्मा का श्रद्धान और आत्मा का ध्यान – ये ऐसे महान कार्य हैं, जिनमें मुनिराज निरन्तर व्यस्त रहते हैं, शुभभावों में शरण खोजने की उन्हें रंचमात्र भी आवश्यकता नहीं है।

शुभभाव को ही धर्म माननेवालों को यह चिन्ता सताती है कि यदि शुभभाव का भी निषेध करेंगे तो मुनिराज अशरण हो जायेंगे, उन्हें करने के लिए कोई काम नहीं रहेगा। आत्मा के ज्ञान, ध्यान और श्रद्धानमय वीतरागभाव की खबर न होने से ही अज्ञानियों को ऐसे विकल्प उठते हैं; किन्तु शुभभाव होना कोई अपूर्व उपलब्धि नहीं है; क्योंकि शुभभाव तो इस जीव को अनेकबार हुए हैं, पर उनसे भव का अन्त नहीं आया। यदि शुभभाव नहीं हुए होते तो यह मनुष्य भव ही नहीं मिलता।

यह मनुष्य भव और ये अनुकूल संयोग ही यह बताते हैं कि हमने पूर्व में अनेकप्रकार के शुभभाव किये हैं; पर दु:खों का अन्त नहीं आया है। अत: अब एकबार गंभीरता से विचार करके यह निर्णय करें कि शुभभाव में धर्म नहीं है, शुभभाव कर्तव्य नहीं है; **धर्म तो वीतरागभावरूप ही है और एकमात्र कर्तव्य भी वही है। वे वीतरागभाव आत्मा के आश्रय से होते हैं; अत: अपना आत्मा ही परमशरण है।**

जिन मुनिराजों को निज भगवान आत्मा का परमशरण प्राप्त है, उन्हें अशरण समझना हमारे अज्ञान को ही प्रदर्शित करता है।

वे परमार्थ से बाह्य हैं

(८५)

परमट्ठबाहिरा जे ते अण्णाणेण पुण्णमिच्छंति।
संसारगमणहेदुं पि मोक्खहेदुं अजाणंता॥

(हरिगीत)

परमार्थ से हैं बाह्य वे जो मोक्षमग नहीं जानते।
अज्ञान से भवगमन-कारण पुण्य को हैं चाहते॥

जो जीव वीतरागभाव रूप मोक्षमार्ग को नहीं जानते हैं तथा संसार-परिभ्रमण का हेतु होने पर भी अज्ञान से पुण्य को मोक्षमार्ग मानकर चाहते हैं, वे जीव परमार्थ से बाहर हैं। तात्पर्य यह है कि उन्हें कभी भी मोक्ष की प्राप्ति नहीं होगी।

यह गाथा समयसार शास्त्र की १५४वीं गाथा है। इसमें बताया गया है कि जो लोग सच्चे मुक्ति के मार्ग को तो जानते नहीं हैं, परम+अर्थ=परमार्थ=सच्चे भगवान आत्मा को तो जानते नहीं हैं और पुण्य को मोक्ष का मार्ग जानकर पुण्य को चाहते हैं, अपनाते हैं; उन्हें मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती।

यहाँ यह कहा जा रहा है कि जो जीव परमार्थ से बाह्य हैं अथवा परमार्थ में अस्थित हैं; त्रिकाली ध्रुव निज भगवान आत्मा को नहीं जानते हैं; उनके व्रत, नियम, तप, शील – सभी व्यर्थ हैं। उन्हें आत्मज्ञान बिना मात्र इन व्रतादि से मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती।

तात्पर्य यह है कि आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान से संयुक्त **ज्ञानीजन व्रत, तप, शीलादि के बिना भी मुक्त होते देखे जाते हैं।**

आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान से शून्य अज्ञानीजन व्रत-नियमादि का पालन करते हुए भी मुक्त नहीं होते; इसकारण यह सहज ही सिद्ध है कि **आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यानरूप आत्मज्ञान ही मुक्ति का**

एकमात्र हेतु है।

यहाँ एक प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि यदि आत्मा के ज्ञान, श्रद्धान और ध्यान के सद्भाव में ज्ञानियों को व्रत, नियम, शील व तपादि के बिना भी मुक्ति प्राप्त हो सकती है तो फिर तो ज्ञानियों को विषय-व्यापार में प्रवृत्त होना भी पाप नहीं होगा; क्योंकि व्रत-नियमादि में विषय-व्यापार का ही तो त्याग होता है। विषय-व्यापार के त्याग का नाम ही तो व्रत है, नियम है, शील है।

आचार्य जयसेन ने स्वयं इसप्रकार का प्रश्न उपस्थित कर, इसका तर्कसंगत उत्तर दिया है; जो इसप्रकार है –

''**शंका –** व्रत, नियम, शील एवं बहिरंग तपश्चरणादिक के बिना भी यदि मोक्ष होता है तो फिर तो **संकल्प-विकल्प रहित ज्ञानियों का विषय-व्यापार में रहना भी पाप नहीं होगा और यदि तपश्चरण के अभाव में भी मोक्ष होता है तो इससे तो सांख्य और शैवमत की ही सिद्धि होगी।**

समाधान – यह कहना ठीक नहीं है; क्योंकि यह तो हम अनेक बार कह चुके हैं कि निर्विकल्पत्रिगुप्तिसमाधिलक्षण भेदज्ञान सहित जीवों को मोक्ष होता है। इसप्रकार के भेदज्ञान के समय तो मन, वचन और काय का वह शुभरूप व्यापार भी नहीं रहता, जिसे परम्परा से मुक्ति का कारण कहा जाता है; तो फिर विषय-कषायरूप अशुभ व्यापार के होने का सवाल ही कहाँ रहता है ?

जिसप्रकार चावल के अंतरंग तुष (लाल कण) के चले जाने पर बहिरंग तुष (छिलका) नहीं रह सकता; उसीप्रकार चित्त में स्थित रागभाव के नष्ट हो जाने पर बहिरंग विषयव्यापार भी दिखाई नहीं देता।

जिसप्रकार परस्पर विरुद्धस्वभाववाले होने से जहाँ शीतलता होती है, वहाँ उष्णता नहीं होती और जहाँ उष्णता होती है, वहाँ शीतलता नहीं

होती; उसीप्रकार परस्पर विरुद्धस्वभाववाले होने से **जहाँ-जहाँ निर्विकल्प समाधिलक्षण भेदविज्ञान होता है, वहाँ विषय-कषायरूप व्यापार नहीं होता और जहाँ विषय-कषायरूप व्यापार होता है, वहाँ निर्विकल्प समाधिलक्षण भेदविज्ञान नहीं होता।''**

तात्पर्य यह है कि मुक्ति का साक्षात् कारण तो शुद्धोपयोग दशा है और शुद्धोपयोगरूप दशा में जब वह शुभोपयोग भी नहीं रहता, जिसे परम्परा से मुक्ति का कारण कहा जाता है; तो फिर अशुभोपयोग के रहने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

शुद्धोपयोग तो शुभोपयोग और अशुभोपयोग तथा शुभ प्रवृत्ति और अशुभ प्रवृत्ति – इन सभी के अभाव में उत्पन्न होने वाली स्थिति है।

इसप्रकार इन गाथाओं में भी यही कहा गया है कि ज्ञान ही मोक्ष का हेतु है।

(क्रमशः)

(पृष्ठ 17 का शेष ...)

नहीं माना जा सकता; उसीप्रकार पाँच महाव्रत के परिणाम, बारहव्रत के परिणाम, भगवान की श्रद्धा का राग इत्यादि परिणाम काँच के रत्न जैसे हैं। ये सब परिणाम सर्व दोषों के प्रसंगवाले अनाचाररूप हैं। ऐसा होने पर भी अज्ञानी जीव शुद्ध चैतन्यमूर्ति का अवलम्बन छोड़कर राग का अवलम्बन लेता है; वह अनाचार है, व्यभिचार है। पतिव्रता स्त्री अपने पति के अतिरिक्त अन्य की इच्छा नहीं करती – ऐसी लौकिक नीति है; तथापि कोई स्त्री दूसरे के प्रेम में पड़ जाय तो वह व्यभिचारिणी कहलाती है। उसी भाँति आत्मा शुद्ध चिदानन्दस्वरूपी है, उसके साथ प्रेम छोड़कर जो जीव पुण्य-पाप को स्वीकार करता है; पुण्य से इन्द्रपद, देवपद मिलेगा – ऐसे प्रलोभन में फँसकर पुण्य से लाभ मानता है; वह अनाचारी है, महामिथ्यात्वी है।

जन्म-मरण के कारणरूप अनाचार छोड़कर धर्मी जीव अनन्तचतुष्टयरूप आत्मा में स्थिर है, वीतरागी शमरस से पवित्र होता है। **(क्रमशः)**

छहढाला प्रवचन

मनुष्य भव में मुनिधर्म

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव-भोगनतैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिंते अनुप्रेक्षा भाई।।१।।
इन चिन्तत सम सुख जागे, जिमि ज्वलन पवन के लागे।
जब ही जिय आतम जाने, तब ही जिय शिवसुख ठाने।।२।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की पांचवीं ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होने के पश्चात् शुद्धि की वृद्धि होने पर श्रावकदशा उत्पन्न होती है। श्रावक की भूमिका में होने वाले अणुव्रतों का वर्णन चौथी ढाल में किया गया है। श्रावक को और अधिक शुद्धता बढ़ने पर मुनिदशा होती है और वह सकलव्रत अर्थात् मुनिव्रतों का पालन करता है। मुनिदीक्षा लेते समय वह भेदज्ञानपूर्वक बारह वैराग्य भावनाओं का चिंतन करता है। अनित्य अशरण इत्यादि भावनाओं का चिंतन वैराग्य को उत्पन्न करने के लिए माता के समान है।

कार्तिकेयस्वामी ने बारह भावनाओं का वर्णन करते हुए उन्हें भविकजन आनन्द-जननी कहा है। वास्तव में वस्तुस्वरूप के अनुसार बारह भावनाओं का चिंतन संसार से वैराग्य उत्पन्न करता है और आत्मिक आनन्द प्रकट करता है।

अहा ! जैन मुनियों की क्या बात कहें। वे तो आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द में झूलते ही रहते हैं और इन वैराग्य भावनाओं के चिंतन द्वारा निरन्तर वीतरागता और आनन्द बढ़ाते रहते हैं। इसलिए ये भावनायें

आनन्द की जननी हैं। तीर्थंकर भगवान भी दीक्षा लेते समय इन वैराग्य भावनाओं का चिन्तन करते हैं। अहो ! मुनि भगवंत महाभाग्यवान हैं; क्योंकि वे आत्मा के आनन्द में झूलते-झूलते मुक्ति की साधना करते हैं। यहाँ उन्हीं मुनिवरों द्वारा भायी जानेवाली भावनाओं का वर्णन किया जा रहा है।

यहाँ प्रश्न हो सकता है कि ये भावनाएँ तो मुनिवरों की हैं, हम गृहस्थों को इनसे क्या लाभ ?

इसके उत्तर में श्रीगुरु कहते हैं कि हे भाई ! यद्यपि इनमें मुनियों की प्रधानता है; परन्तु उनके समान, गृहस्थ श्रावकों को भी ये भावनाएँ भाना चाहिए; क्योंकि भेदज्ञानपूर्वक ऐसी भावना भाने से वैराग्य बढ़ाकर मुनि होने पर ही मुक्ति संभव है। जब यह जीव मुनि होकर सम्पूर्ण वीतरागी चारित्रदशा प्रकट करेगा, तभी उसे केवलज्ञान होगा तथा मुक्ति प्राप्त होगी। वीतरागी चारित्र के बिना कोई जीव मोक्ष नहीं जा सकता। सम्यग्दर्शन-ज्ञान की आराधना करके फिर सम्यक्चारित्र की आराधना करना चाहिए - ऐसा जिनेन्द्रदेव का उपदेश है।

ये बारह भावनायें वस्तु-स्वरूप के ज्ञान सहित भायी जाती हैं; क्योंकि वस्तु-स्वरूप का सम्यग्ज्ञान हुए बिना इनका सच्चा चिन्तन नहीं होता। वस्तु-स्वरूप के ज्ञानपूर्वक इन भावनाओं का चिन्तन करने से जीव के परिणामों में समभावरूपी सुख तुरन्त प्रकट हो जाता है। जिसप्रकार हवा का झौंका लगने से अग्नि भभक उठती है, उसीप्रकार सम्यग्ज्ञानरूपी ज्योति में इन वैराग्य चिंतनरूपी भावनाओं का झौंका लगते ही तुरन्त वीतरागी चारित्रदशा प्रतापवन्त (प्रकट) हो जाती है अर्थात् सुख की वृद्धि होती है, समता भाव जाग्रत होता है। इसप्रकार ये बारह भावनायें भव्यजीवों को आनन्द देने वाली हैं। प्रत्येक जीव को ये भावनाएँ भाना चाहिए। जब यह

जीव आत्मज्ञान करके वैराग्य भावनापूर्वक निजस्वरूप में लीन होता है, तभी उसे मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

अहो ! मुनियों की क्या बात कहें ? मुनिराज तो सकलव्रत के धारक होते हैं तथा वे मोक्ष का महान पुरुषार्थ करते हैं; इसलिए महान भाग्यवान हैं। वे स्वर्ग के इन्द्रों से भी अधिक सुखी हैं। संसार, शरीर और भोगों से उदासीन होकर निरन्तर आनन्ददशा में ही झूलते रहते हैं; उन्हें बारम्बार निर्विकल्पदशा प्रकट होती है तथा पुन: सविकल्पदशा होने पर वे बारह भावनाओं का चिन्तन करते हैं।

निर्विकल्पदशा के समय तो अपने स्वरूप की ही अनुभूति होती है, उस समय अन्य विचार नहीं होता। यद्यपि श्रावक और गृहस्थ सम्यग्दृष्टि को भी अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव होता है; परन्तु वह अत्यन्त अल्प है। मुनिराज को तो प्रचुर आनन्द प्रकट हो जाता है। वे अधिक समय तक विकल्पों की आकुलता में नहीं रहते। उनका आत्मा प्रतिक्षण विकल्पों से मुक्त होता जाता है। चैतन्य के आनन्द में लीन मुनियों को विशेष निद्रा या प्रमाद नहीं होता। कभी-कभी रात्रि के पिछले प्रहर में क्षणभर के लिए थोड़ी-सी निद्रा आती है। जब सारा जगत सोता रहता है, तब मुनिराज जागृत होकर आत्म-चिन्तन करते हैं, बारह भावनाओं का चिन्तन करते हैं।

(क्रमश:)

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com
ये सभी प्रवचन सामग्री अब vitragvani एप पर भी उपलब्ध है।

नियमसार प्रवचन –

आचार में स्थिरता वाला प्रतिक्रमणमय

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के परमार्थप्रतिक्रमणाधिकार की गाथा ८५ पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। गाथा मूलतः इसप्रकार हैं –

मोत्तूण अणायारं आयारे जो दु कुणदि थिरभावं।
सो पडिकमणं उच्चइ पडिकमणमओ हवे जम्हा ।।८५।।

(हरिगीत)

जो जीव छोड़ अनाचरण आचार में थिरता धरे।
प्रतिक्रमणमय है इसलिए प्रतिक्रमण कहते हैं उसे।।८५।।

जो जीव अनाचार छोड़कर आचार में स्थिरता करता है, वह जीव प्रतिक्रमण कहा जाता है; क्योंकि वह प्रतिक्रमणमय है।

(गतांक से आगे....)

शंका : तो फिर पूजा, भक्ति आदि करना चाहिए या नहीं?

समाधान : शुभाशुभभाव उस-उस काल में रागी जीव को आए बिना रहते नहीं। अशुभ से बचने के लिए शुभ आवे, वह भिन्न बात है; किन्तु शुभ से कल्याण मानकर धर्म मानना, वह भूल है – मिथ्यात्व है। आत्मा उन दोनों भावों से रहित है, उसके आश्रय से धर्म है, इसप्रकार की सच्ची मान्यता प्रथम करनी चाहिए। आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वभावी है, ऐसा भान होनेवाले को कषायमन्दता, लोभ की हानि, अशुभराग का घटना आदि हुए बिना रहेगा ही नहीं; तथापि वह शुभ से धर्म नहीं मानता। अतः शुद्ध आत्मा की पहिचान प्रथम करना चाहिए।

दूसरा कलश इसप्रकार है –

(स्रग्धरा)

मुक्त्वानाचारमुच्चैर्जननमृतकरं सर्वदोषप्रसंगं
स्थित्वात्मन्यात्मनात्मा निरूपमसहजानंददृग्ज्ञप्तिशक्तौ।
बाह्याचारप्रमुक्तः शमजलनिधिवार्बिन्दुसंदोहपूतः
सोऽयं पुण्यः पुराणः क्षपितमलकलिर्भाति लोकोद्धसाक्षी।।११४।।

(रोला)

जन्म-मरण के जनक सर्व दोषों को तजकर।
अनुपम सहजानन्दज्ञानदर्शनवीरजमय।।
आतम में थित होकर समताजल समूह से
कर कलिमलक्षय जीव जगत के साक्षी होते।।११४।।

जो आत्मा जन्म-मरण के करनेवाले, सर्व दोषों के प्रसंगवाले अनाचार को अत्यन्त छोड़कर, निरुपम सहज आनन्द-दर्शन-ज्ञान-वीर्यवाले आत्मा में आत्मा से स्थित होकर, बाह्य आचार से मुक्त होता हुआ, शमरूपी समुद्र के जलबिन्दुओं के समूह से पवित्र होता है, ऐसा वह पवित्र पुराण (सनातन) आत्मा मलरूपी क्लेश का क्षय करके लोक का उत्कृष्ट साक्षी होता है।

इस श्लोक में ऐसा बताते हैं कि पुण्य-पापरूपी अनाचार छोड़कर जो शुद्धात्मा में स्थिर होता है, वह केवलज्ञान प्राप्त करके उत्कृष्ट साक्षी होता है। प्रतिक्रमण का अधिकार है। इसलिए 'अनाचार छोड़कर' ऐसा प्रथम नास्ति से कथन किया है।

अपने शुद्धस्वभाव के साथ प्रेम छोड़कर व्यवहाररत्नत्रय के परिणाम के साथ प्रेम करना अनाचार है।

जिस भाव से तीर्थंकर नामकर्म बंधे, जिस भाव से देव का भव मिले, जिस भाव से चौरासी का अवतार मिले, वह भाव तथा व्यवहाररत्नत्रय के परिणामादि जन्म-मरण के करनेवाले हैं। मिथ्यात्व, राग-द्वेषादिभाव जन्म-मरण के करनेवाले हैं। व्यवहाररत्नत्रय तो राग है। काँच को हीरा

(शेष पृष्ठ 12 पर ...)

समयसार की 47 शक्तियों पर प्रवचन

चिति शक्ति

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी द्वारा समयसार की 47 शक्तियों पर किये गये प्रवचनों को यहाँ पाठकों के लाभार्थ क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है।

(गतांक से आगे....)

अजडत्वात्मिका चितिशक्ति:

अजडत्वस्वरूप चितिशक्ति। अजड़त्व अर्थात् चेतनत्व जिसका स्वरूप है – ऐसी चितिशक्ति।

पहले जीवत्वशक्ति द्वारा जीव का त्रिकाल जीवित रहना सिद्ध किया था और अब चितिशक्ति द्वारा जीव का यह जीवन त्रिकाल अजड़त्वस्वरूप अर्थात् चैतन्यमय है – ऐसा कहते हैं। **चितिशक्ति जीवत्वशक्ति का लक्षण है।**

प्रश्न – यह तो पहले जीवत्वशक्ति में ही बताया जा चुका है तो भी यहाँ पृथक् से चितिशक्ति क्यों कही गई है?

उत्तर – चितिशक्ति यह बताने के लिए कही गई है कि **जीववस्तु त्रिकाल अजड़त्वस्वरूप चैतन्यमय है।**

चितिशक्ति अजड़त्वस्वरूप/चैतन्यमय है और उसे धारण करनेवाली अनन्त गुणधाम जीववस्तु भी अजड़त्वस्वरूप चैतन्यमय है। आ हा हा...! दृष्टिवंत समकिती जीव के अन्तरंग में जीवत्वशक्ति के साथ चितिशक्ति भी उछलती है/प्रगट होती है।

यह राग-द्वेष-मोह एवं पुण्य-पाप के भाव आत्मा की चीज नहीं हैं;

क्योंकि ये तो सभी जड़ हैं और भगवान आत्मा अजड़/चैतन्यमय है।

पहले जीवत्वशक्ति में तो 'जीव का त्रिकाल जीनेरूप/टिकनेरूप परिणमन है' – यह बताया था तथा यहाँ यह बताया है कि उसका त्रिकाल जीनेरूप/टिकनेरूप जीवन चैतन्यमय है। जीवत्वशक्ति में चितिशक्ति का रूप है न! इसलिए जीव के जीवत्व को अजड़त्व/चेतनपना है।

ज्ञानानन्दस्वभावी भगवान आत्मा में अजड़त्वस्वरूप चितिशक्ति है। इसमें थोड़े शब्दों में बहुत ही गम्भीर बात कह दी है। कहते हैं कि इस **चितिशक्ति में जड़पना नहीं है और ये शरीर-मन-वाणी, इन्द्रियाँ तथा कर्म आदि तो सभी जड़ हैं। इसलिए ये शरीरादि पदार्थ आत्मवस्तु नहीं है।** आत्मा से भिन्न वस्तु है/बाह्य वस्तु है – ऐसी सूक्ष्म बात है।

यह सूक्ष्म बात लोगों को अभ्यास के बिना जंचती/जमती नहीं है; समझ में नहीं आती; परन्तु ऐसा कहते रहने से क्या होगा? प्रयास तो करना ही होगा न!

आहाहा...! आत्मा में जिसप्रकार एक जीवत्वशक्ति है; उसीप्रकार चितिशक्ति है। अरे! संख्या-अपेक्षा ऐसी-ऐसी अनन्तशक्तियाँ एक आत्मद्रव्य में हैं। **यह लोक असंख्य योजन विस्तारवाला है और लोक के बाहर सम्पूर्ण अलोक अनन्त योजन विस्तारवाला है।**

प्रश्न – कोई कहे कि उसके बाद क्या है?

उत्तर – तो कहते हैं कि भाई! उसका **अन्त नहीं आता – ऐसा का ऐसा अनन्त-अनन्त योजन में आकाश ही आकाश है, कहीं भी इसके क्षेत्र का अन्त नहीं है।** अहा! **आकाश के क्षेत्र के विस्तार का जिसप्रकार कहीं अन्त नहीं है; उसीप्रकार आकाश के अनन्त क्षेत्र को जाननेवाले भगवान आत्मा के ज्ञान का भी अन्त नहीं है।**

(क्रमश:)

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : दर्शनमोहनीय की एक प्रकृति का नाम 'सम्यक्त्व-प्रकृति' क्यों है ?

उत्तर : क्योंकि उसके उदय के साथ सम्यक्त्व भी होता है। अर्थात् सम्यक्त्व का सहचारी होने से उसका नाम 'सम्यक्त्व-प्रकृति' पड़ा है। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के साथ उसका उदय होता है।

प्रश्न : संख्या की अपेक्षा से बड़े से बड़ा अनन्त कौन ?

उत्तर : केवलज्ञान का अविभाग प्रतिच्छेद सबसे महान अनन्त है। अलोकाकाश के प्रदेश इत्यादि दूसरे अनन्त से भी वह अनन्तगुना है – ऐसा कहकर भी उसका माप नहीं निकाला जा सकता। आत्मद्रव्य की यह कोई अचिन्त्य शक्ति है। जिसप्रकार विकल्प से उसकी शक्ति का पार नहीं पाया जा सकता; उसीप्रकार गणित से भी उसकी शक्ति का पार नहीं पाया जा सकता।

प्रश्न : भरतक्षेत्र का जीव मरकर सीधा विदेह में जन्म लेता है क्या ?

उत्तर : हाँ; यदि मिथ्यादृष्टि है, तो विदेह में जन्म ले सकता है। परन्तु आराधक मनुष्य मरकर कर्मभूमि के मनुष्यों में (विदेहादि में) जन्म नहीं लेता– ऐसा नियम है। विराधक जीव तो चाहे जहाँ जन्म ले सकता है। कदाचित् किसी मनुष्य को पूर्व में मिथ्यात्व दशा में मनुष्यायु का बंध हो गया हो, पश्चात् सम्यक्त्व (क्षायिक) प्राप्त हो जाये तो वह आराधक जीव मरकर मनुष्य में उत्पन्न होगा, परन्तु वह असंख्यात वर्ष की आयुष्यवाली भोगभूमि में मनुष्य होगा, कर्मभूमि में जन्म नहीं लेगा – ऐसा नियम है। विदेहक्षेत्र भी कर्मभूमि है। भोगभूमि में चतुर्थ गुणस्थान से ऊपर का कोई गुणस्थान नहीं होता और वहाँ का जीव मरकर नियम से स्वर्ग में ही जाता है।

प्रश्न : केवली के शरीर में निगोदिया जीव होते हैं क्या ?

उत्तर : नहीं; केवलज्ञानी का परमौदारिक शरीर होता है, अत: उसके आश्रय

से निगोदिया जीव नहीं होते। यद्यपि आकाश के उसी क्षेत्र में होते हैं; क्योंकि लोक में सर्वत्र निगोदिया जीव भरे पड़े हैं; तथापि वे जीव परमौदारिक शरीर के आश्रित नहीं हैं। केवली का परमौदारिक शरीर, मुनि का आहारक शरीर, देवों का तथा नारकियों का वैक्रियक शरीर तथा पृथ्वीकाय, अपकाय, वायुकाय और तेजोकाय – इन स्थानों के आश्रय से निगोदिया जीव नहीं होते।

प्रश्न : आकाश के एकप्रदेश में अनन्त परमाणु और अनन्त जीवों के प्रदेश कैसे रह सकते हैं ?

उत्तर : जिसका जो स्वभाव हो, उसमें कोई मर्यादा या हद नहीं हो सकती; स्वभाव तो सदैव अमर्यादित और असीम ही होता है। लोक में स्थित अनन्त परमाणु सूक्ष्मरूप से आवें तो उन्हें आकाश का एक प्रदेश अवगाहन देता है; ऐसा अवगाहन देने का आकाश का अमर्यादित स्वभाव है। आकाश के एकप्रदेश में इतना असीम सामर्थ्य है कि अनन्त पुद्गलों और अनन्त जीवों के प्रदेशों को तथा धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और काल के एक-एक प्रदेश को एक साथ अवगाहन दे सकता है।

जितने क्षेत्र में एक परमाणु रहता है, आकाश का एकप्रदेश उतने ही मापवाला होता है; किन्तु उसमें अनन्त को अवगाहन देने की अमाप सामर्थ्य है।

देखो ! यह सारी बातें कहने का मूल तात्पर्य तो इन सबको जाननेवाली एक समयवर्ती ज्ञान पर्याय की सामर्थ्य बताने का है।

एक समय की ज्ञानपर्याय अनन्तानन्त पदार्थो को , उनकी भूत-भविष्य की पर्यायों सहित जान लेती है। अरे! जब जड़रूप आकाश का एकप्रदेश अनन्त रजकण को स्थान दे सकता है, तो उसको जाननेवाले जीव के ज्ञायकस्वभाव की सामर्थ्य का क्या कहना ? वह तो अमर्यादित, अमाप और अनन्त है ही। गजब बात है!

अरे ! यह तो अपने हित की बात है; दूसरों को समझाने के लियें नहीं। अपने ज्ञान की सामर्थ्य स्वयं समझकर, श्रद्धा में लेकर अन्दर में समाने के लिए है।

श्रीमद् राजचंद्रजी कहते हैं कि – ''जो समझा, वह समा गया, बाह्य में कहने के लिये रुका नहीं'' अहा हा ! ऐसे स्वभाव का माहात्म्य जिस पर्याय में आया, वह पर्याय अन्दर में प्रविष्ट हुए बिना रहे नहीं, और भगवान आत्मा से भेंट करे ही।

समाचार दर्शन -

दशलक्षण महापर्व सानन्द संपन्न

सार्वभौमिक एवं त्रैकालिक दशलक्षण महापर्व सम्पूर्ण देश-विदेश में दिनांक 14 सितम्बर से 23 सितम्बर तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। पर्व के दौरान सभी स्थानों पर मंदिरों में पूजन-विधान, प्रवचन, प्रौढ़ एवं बालकक्षाओं की धूम रही। लगभग सभी स्थानों पर सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से महती धर्म प्रभावना हुई। देश-विदेश के कोने-कोने से प्राप्त समाचारों को यहाँ संक्षेप में प्रकाशित किया जा रहा है।

● **बेलगांव (कर्नाटक) :** यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रात: दशलक्षण मण्डल विधान के उपरान्त अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा शंका-समाधान एवं रात्रि में दशलक्षण धर्म पर प्रवचनों का लाभ मिला। इसके अतिरिक्त पण्डित शीतलजी शेट्टी, पण्डित मिथुनजी शास्त्री, पण्डित एकत्वजी शास्त्री, पण्डित सुधर्मजी शास्त्री, पण्डित अक्षयजी शास्त्री, विदुषी धवलश्री पाटील के भी प्रवचन हुये। रात्रि में प्रवचन के उपरान्त सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ।

दिनांक 23 सितम्बर को दोपहर में 'नयचक्र' विषय पर विद्वत्गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसमें 12 विद्वानों के वक्तव्य का लाभ मिला। साथ ही जैन युवक मण्डल की स्वर्ण जयंती के अवसर पर पाठशाला चलाओ अभियान का उद्घाटन डॉ. भारिल्ल द्वारा किया गया।

● **छिन्दवाड़ा (म.प्र.) :** यहाँ गोलगंज में महापर्व के अवसर पर प्रात: दशलक्षण मंडल विधान के उपरान्त गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन हुआ। तदुपरान्त डॉ. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा प्रवचनसार पर एवं रात्रि में मोक्षमार्ग प्रकाशक पर प्रवचनों का लाभ मिला। विदुषी प्रतीति पाटील द्वारा दोपहर में परीक्षामुख एवं रात्रि में दशलक्षण धर्म पर प्रवचन हुये, प्रात: गांधीगंज स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में इष्टोपदेश पर प्रवचन हुये। रात्रि में प्रवचन के उपरान्त सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ। विधान के समस्त कार्य पण्डित ऋषभजी शास्त्री द्वारा कराये गये।

● **लन्दन (यू.के.) :** यहाँ महापर्व के अवसर पर प्रतिदिन प्रात: नित्य-नियम पूजन के पश्चात् दशलक्षण मण्डल विधान का आयोजन हुआ। इस प्रसंग पर प्रतिदिन डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के प्रात: निश्चय-व्यवहार आदि विविध नयों के प्रयोग एवं सायंकाल दशलक्षण धर्म पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। अन्तिम दो दिन क्रमश: 'जम्बूद्वीप' एवं 'कर्मों का खेल' विषय पर सेमिनार भी किया गया। प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के अतिरिक्त जिनेन्द्र भक्ति एवं प्रतिक्रमण हुआ। पाठशाला के बच्चों द्वारा विशेष कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये।

– संदीपभाई

● **जयपुर-टोडरमल स्मारक भवन (राज.) :** यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर श्री टोडरमल स्मारक भवन में प्रात: दशलक्षण विधान के उपरान्त पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री द्वारा कार्तिकेयानुप्रेक्षा पर प्रवचन, सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में पण्डित प्रमोदजी शास्त्री शाहगढ द्वारा मोक्षमार्गप्रकाशक पर प्रवचन हुये। तत्पश्चात् उपाध्याय कनिष्ठ, वरिष्ठ के विद्यार्थियों व वीतराग विज्ञान महिला मंडल द्वारा ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ।

सुगन्ध दशमी के दिन अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन जयपुर महानगर, टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय एवं वीतराग-विज्ञान महिला मंडल बापूनगर द्वारा **'निमित्त-उपादान अदालत में'** विषय पर आकर्षक व भव्य सजीव झांकी लगाई गई, जिसे जयपुर के लगभग 2000-2500 लोगों ने देखा और उसकी भरपूर सराहना की। विधि-विधान के कार्य पण्डित जिनकुमारजी शास्त्री ने विद्यार्थियों के सहयोग से संपन्न कराये।

● **भीलवाड़ा (राज.) :** यहाँ महापर्व के अवसर पर अजमेरों की गोठ स्थित बड़े मन्दिर में डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' जयपुर द्वारा प्रतिदिन चारों अनुयोगों की शैली में दशलक्षण पर्व पर प्रवचन एवं दोपहर में शंका समाधान हुये। प्रात:काल बिचले मंदिर में समयसार पर प्रवचनों का लाभ मिला।

● **हिंगोली (महा.) :** यहाँ दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रात: दशलक्षण मण्डल विधान के उपरान्त पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर द्वारा प्रात: समयसार एवं दोपहर में पुरुषार्थसिद्धिउपाय एवं रात्रि में विविध विषयों पर प्रवचन हुये।

इस अवसर पर स्थायी रविवारीय पाठशाला की स्थापना हुई। चतुर्दशी के दिन मंदिर में बड़ी टी.वी. पर डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म 'समय की ओर' दिखाई गई।

● **गुना (म.प्र.) :** यहाँ महापर्व के अवसर पर महावीर जिनालय में डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर द्वारा प्रात: समयसार एवं रात्रि में भक्तामर स्तोत्र व मोक्षमार्गप्रकाशक पर प्रवचन हुये। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम भी हुये। **– राजकुमार जैन**

● **न्यूजर्सी (अमेरिका) :** यहाँ महापर्व के अवसर पर फ्रैंकलिन टाउनशिप में स्थित जैन सेन्टर में पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर के सान्निध्य में प्रात: जिनेन्द्र-पूजन का आयोजन किया गया, तत्पश्चात् समयसार पर प्रवचन एवं रात्रि में लघु प्रतिक्रमण के उपरांत दशलक्षण धर्म, मिथ्यात्व, अनेकान्त-स्याद्वाद आदि विभिन्न विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला। अन्तिम दो दिन पंच परमेष्ठी विधान एवं दशलक्षण मंडल विधान संपन्न हुये। **– हिमांशु जैन**

● **मुम्बई :** यहाँ महापर्व के अवसर पर सीमंधर जिनालय में दशलक्षण मंडल विधान

(शेष पृष्ठ 26 पर ...)

स्नातक परिषद की संगोष्ठी संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में हुए आध्यात्मिक शिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 15 अगस्त को पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद् द्वारा '**स्वतंत्रता का उद्घोषक जैनदर्शन**' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

गोष्ठी के अध्यक्ष पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री एवं मुख्य अतिथि पण्डित शिखरचंदजी विदिशा व श्री दिलीपभाई शाह मुम्बई थे। अतिथियों का स्वागत पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर एवं डॉ. प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा ने किया।

मुख्य वक्ता के रूप में डॉ. नरेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर (वस्तु व्यवस्था एवं वस्तु स्वातंत्र्य), डॉ. दीपकजी जैन जयपुर (विश्व व्यवस्था एवं वस्तु स्वातंत्र्य), डॉ. योगेशजी शास्त्री लाडनू (पंच समवाय एवं वस्तु स्वातंत्र्य) एवं पण्डित अरुणजी शास्त्री जयपुर (षट्कारक एवं वस्तु स्वातंत्र्य) ने अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया।

कार्यक्रम का मंगलाचरण कु. प्रतीति पाटील शास्त्री एवं संचालन डॉ. शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय की –

साप्ताहिक गोष्ठियाँ संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा आयोजित गोष्ठियों के क्रम में दिनांक 26 अगस्त को '**रक्षाबन्धन पर्व**' विषय पर गोष्ठी आयोजित हुई, जिसकी अध्यक्षता पण्डित अनिलजी शास्त्री खनियांधाना ने की। विशिष्ट अतिथि के रूप में पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर उपस्थित थे।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से अंकुर जैन (उपाध्याय वरिष्ठ) एवं शास्त्री वर्ग से प्रांजल जैन (शास्त्री तृतीय वर्ष) रहे। गोष्ठी का संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के प्रशांत जैन व अमन जैन ने किया। आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने एवं ग्रंथ भेंट गौरवजी शास्त्री ने किया।

दिनांक 2 सितम्बर को '**चारित्तं खलु धम्मो**' विषय पर गोष्ठी आयोजित हुई, जिसकी अध्यक्षता डॉ. दीपकजी जैन 'वैद्य' ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में प्रथम स्थान पर मयंक जैन बण्डा (शास्त्री द्वितीय वर्ष) एवं द्वितीय स्थान पर अमन जैन आरोन (शास्त्री प्रथम वर्ष) व हरीश जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे।

गोष्ठी का मंगलाचरण वैभव जैन, सागर (उपाध्याय कनिष्ठ) ने एवं संचालन शास्त्री तृतीय वर्ष के शाश्वत जैन बड़ामलहरा व पीयूष जैन मडावरा ने किया। आभार प्रदर्शन जिनकुमारजी शास्त्री ने एवं ग्रंथ भेंट गौरवजी शास्त्री ने किया।

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय की –

विशेष प्रतियोगिता संपन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में टोडरमल महाविद्यालय की विशेष प्रतियोगिता दिनांक 6 सितम्बर को '**प्रथमानुयोग के प्रसंगों में सिद्धांत**' विषय पर आयोजित हुई, जिसमें 11 वक्ताओं ने प्रथमानुयोग के विशेष प्रसंगों को सुनाकर उसमें से क्रमबद्धपर्याय, निमित्त-उपादान, अकर्तावाद, पंचभाव, चार अभाव, पांच समवाय, संसार की विचित्रता आदि सिद्धांतों पर प्रकाश डाला।

इस अवसर पर श्रेष्ठ वक्ता के रूप में प्रतीक जैन विदिशा (शास्त्री तृतीय वर्ष), संयम जैन दिल्ली एवं अंकुर जैन खड़ैरी (शास्त्री प्रथम वर्ष) चुने गये। निर्णायक के रूप में अच्युतकांतजी शास्त्री उपस्थित थे।

कार्यक्रम का मंगलाचरण आयुष जैन मडदेवरा ने एवं संचालन शाश्वत जैन बड़ामलहरा ने किया।

टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थियों की –

अनुपम उपलब्धियाँ

(1) संस्कृत कॉलेज की राज्य स्तरीय प्रतियोगिताओं में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के निम्न छात्रों ने स्थान प्राप्त किया है –

● हितंकर जैन पुत्र डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री ने बैडमिन्टन में प्रथम स्थान ● शाश्वत जैन पुत्र श्री राजीवकुमारजी जैन ने अंग्रेजी वाद-विवाद (विपक्ष) में प्रथम स्थान ● यश जैन पुत्र श्री योगेशकुमारजी जैन अंग्रेजी वाद-विवाद (पक्ष) में प्रथम स्थान ● अक्षत जैन पुत्र श्री सुनीलजी शास्त्री ने हिन्दी वाद-विवाद (पक्ष) में प्रथम स्थान ● पीयूष जैन पुत्र श्री मनोजजी जैन ने हिन्दी वाद-विवाद (विपक्ष) में प्रथम स्थान एवं ● संयम पुजारी पुत्र श्री कमलेशकुमारजी पुजारी ने संस्कृत वाद-विवाद (विपक्ष) में प्रथम स्थान।

(2) राजस्थान तृतीय श्रेणी अध्यापक हेतु श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के निम्न स्नातकों का चयन हुआ है –

● सौरभ शास्त्री फूप (41वाँ स्थान) ● हर्षित शास्त्री खनियांधाना (130वाँ स्थान) ● नरेश शास्त्री भगवाँ ● राहुल शास्त्री खड़ैरी।

इस उपलब्धि हेतु टोडरमल महाविद्यालय एवं जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से हार्दिक बधाई!

वैद्यरत्न के बाद एक और उपाधि

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के स्नातक एवं अध्यापक डॉ. दीपकजी जैन जयपुर को जनकपुरी-जयपुर जैन समाज द्वारा चिकित्सा क्षेत्र में 25 वर्ष तक सेवाएं देने एवं हड्डियों की तकलीफों पर नवीन औषधि की खोज करने के उपलक्ष्य में 'चिकित्सा-भूषण' उपाधि से सम्मानित किया गया।

(पृष्ठ 23 का शेष ...)

के उपरांत डॉ. प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा द्वारा समयसार व मोक्षमार्गप्रकाशक पर प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ।

• **जयपुर के विभिन्न उपनगरों** में पर्व के अवसर पर जौहरी बाजार स्थित श्री दिगम्बर जैन तेरापंथी पंचायती बड़े मन्दिर में प्रात: पण्डित अरुणजी बण्ड, आदर्शनगर स्थित मुल्तान दिगम्बर जैन मन्दिर में पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, सी-स्कीम स्थित आदिनाथ दिगम्बर जैन चैत्यालय में पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, सी-स्कीम स्थित सेठी चैत्यालय में पण्डित अनेकान्तजी शास्त्री रहली, प्रतापनगर सेक्टर-8 में पण्डित संजीवजी शास्त्री खडैरी, प्रतापनगर सेक्टर-11 में पण्डित अनिलजी शास्त्री खनियांधाना, श्री दिगम्बर जैन खजांची की नसियां में पण्डित दीपकजी शास्त्री मडदेवरा, शक्तिनगर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में पण्डित परेशजी शास्त्री एवं सिवाड़ मन्दिर में पण्डित राहुलजी शास्त्री खडैरी द्वारा प्रवचनों का लाभ मिला।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

5 से 12 अक्टूबर	जयपुर	शिक्षण शिविर
16 से 21 अक्टूबर	पोन्नूर	तमिलनाडु तीर्थयात्रा
31 अक्टूबर	मुम्बई	शिखरजी यात्रा गमन कार्यक्रम
4 से 8 नवम्बर	देवलाली	दीपावली

अंतर में दृष्टि लगाना ही आत्मा का आहार है। श्रद्धा-ज्ञान का बारम्बार अभ्यास करना ही आत्मा का आहार है। 821. – द्रव्यदृष्टि जिनेश्वर, पृष्ठ 188

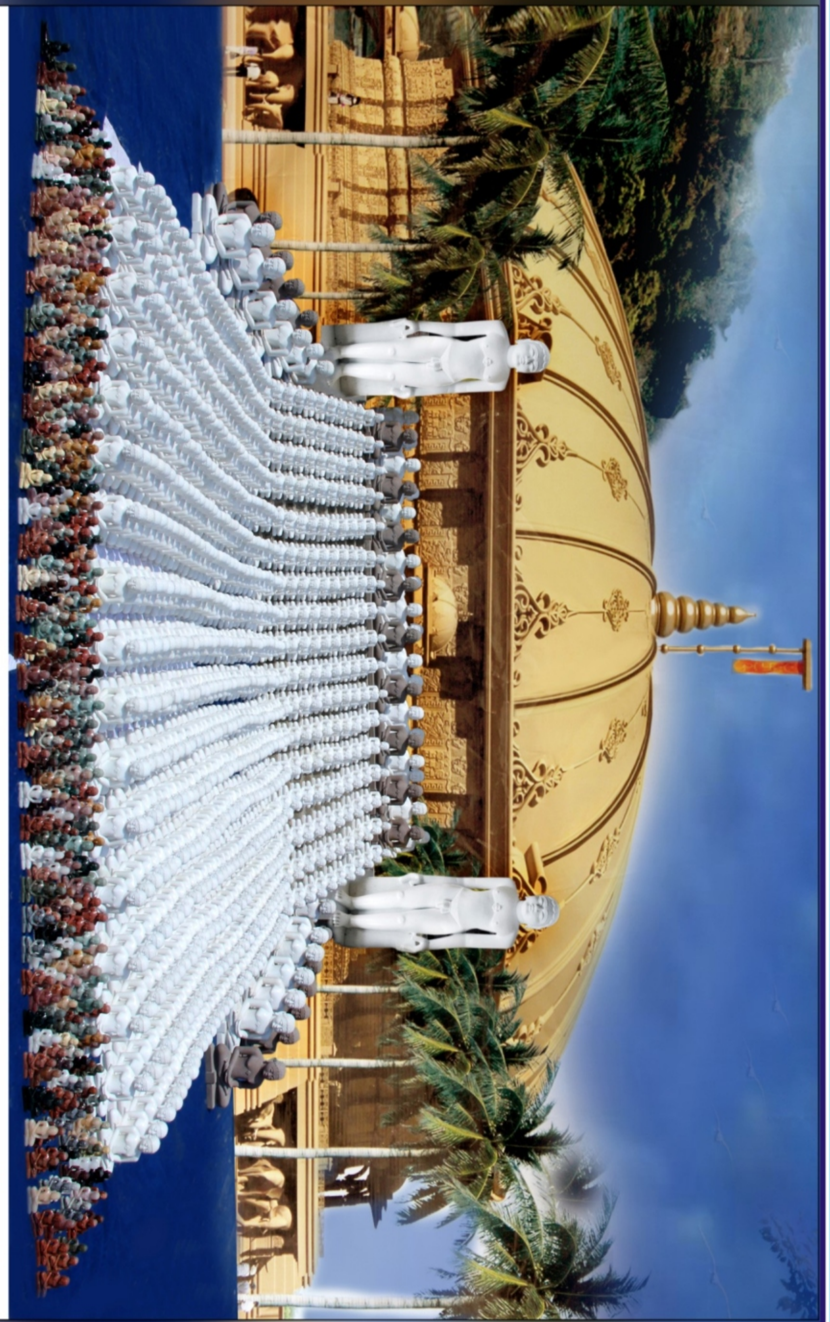

तीर्थधाम ऋद्धिधाम जिनायतन में विराजमान होने वाली 1143 प्रतिमाएं

R.N.I. No. 38278/83 ***Postal Regd. No. JaipurCity/421/2018-20***

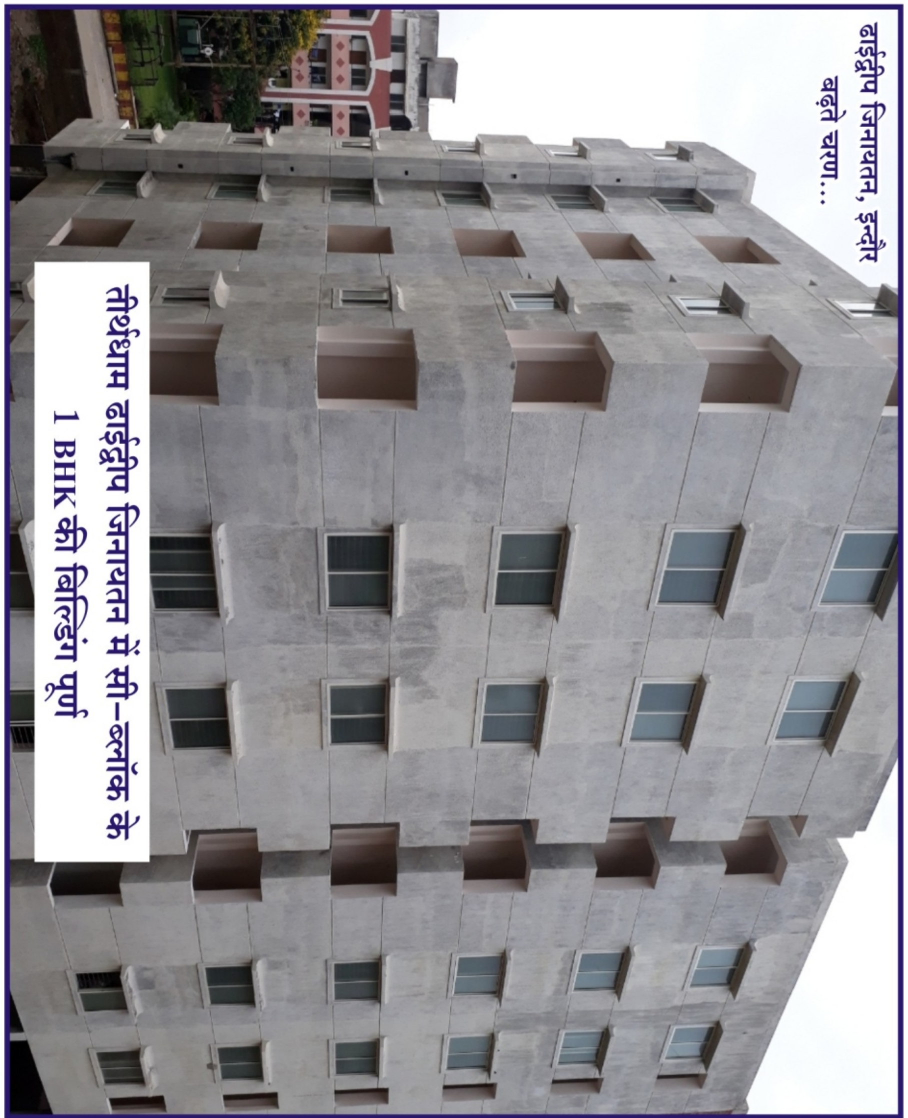

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय, नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**